ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-5* Issue-12* January- 2021
Innovation The Research Concept

संथाल परगना के आदिवासियों के विकास हेतु प्रशासनिक प्रयास

Administrative Efforts for the Development of Tribals of Santhal Parganas

Paper Submission: 15/01/2021, Date of Acceptance: 25/01/2020=1, Date of Publication: 27/01/2021

उज्जवल कुमार भास्कर
शोध छात्र,
राजनीति विज्ञान विभाग,
तिलकामाँझी
भागलपुर विश्वविद्यालय,
भागलपुर, बिहार, भारत

सारांश

संथाल परगना के विभिन्न पंचायतों में संथालों को आर्थिक लाभ पहुँचाने के लिए विविध सहकारिता समितियों का गठन किया गया था। भारतीय समाज में आदिवासी समाज का एक प्यारा स्थान था। वे देश के सबसे पुराने निवासियों में थे और इनका देश की समृद्धि और सांस्कृतिक ढ़ाँचा के निर्माण में बहुत ज्यादा योगदान रहा है। उनकी अपनी विशिष्ट जीवन शैली रही है। जो सामान्य ग्रामीण जनसमाज से सर्वथा भिन्न रही है। विगत दिनों वे अपेक्षाकृत अधिक विलग रहे हैं और उनकी आर्थिक व्यवस्था कमोबेश आत्मनिर्भरता की रही है। स्वतंत्रता पूर्व के भारत में जनजाति समाज के प्रति दया, रियायत या विलगाव का भाव रहा था। स्वतंत्र भारत में ही सरकार का ध्यान इनकी समस्याओं की और गया। और संविधान में इनके लिए कई विशेष संरक्षात्मक प्रावधान किए गए।

समाज विज्ञानी, योजना निर्माता, प्रशासक सभी आदिवासी समाज के विकास के लिए चिन्तित थे जो तथाकथित आदिमयुगीन समाज में रह रहा था। भारतीय मानव विज्ञान (नृविज्ञान) आदिम समाज के निवासियों का अध्ययन करता है।

In various panchayats of Santhal Parganas, various cooperative societies were formed to provide financial benefits to the Santhals. Adivasi society had a beloved place in Indian society. He was among the oldest inhabitants of the country and has contributed immensely in the prosperity and cultural structure of the country. He has his own unique lifestyle. Which has been completely different from normal rural masses. These days they are relatively more isolated and their economic system is more or less self-reliant. In pre-independence India, there was a feeling of kindness, concession or isolation towards the tribal society. It was in independent India that the government's attention turned to their problems. And many special protective provisions were made for them in the Constitution.

Socialists, plan makers, administrators were all concerned for the development of the tribal society that was living in the so-called primitive society. Indian anthropology (anthropology) studies the inhabitants of primitive society.

मुख्य शब्द : संथाल परगना, मानव विज्ञान, आदिम समाज, सरकार, सहाकरी समितियाँ।
Santhal Parganas, Anthropology, Primitive Society, Government, Cooperative Committees.

प्रस्तावना

संथान परगाना जिसका जन्म संथाल विद्रोह के परिणाम स्वरूप एक पृथक जिला के रूप में हुआ वह अविभक्त छोटानागुपर जनजातीय भूखण्ड का एक अंग था। इस क्षेत्र में बसे जनजाति लोगो के विद्रोहात्मक क्रियाकलापों के कारण ब्रिटिश प्रशासन को 1855 में भागलपुर और वीरभूम को मूल जिलो से काटकर इस जिले का निर्माण करना पड़ा था।संथाल परगना में जंगल साफ करने वाले में संथाल की गिनती होती थी। वे जमींदारो और कर्जदाताओं (महाजनों) के अत्याचार के कारण एक जगह नहीं ठहर पाते थे और जगह–जगह जाते रहते थे। अपनी भूमि से उनका अत्यधिक लगाव था और वे

अन्य जगहों की अपेक्षा पहाड़ी भू–भागों और जंगलो में अपनो को अधिक सुरक्षित समझते थे।[1]

संथाल परगना में संथाल जितना अधिक जंगल साफ कर जमीन को खेती लायक बनाते उतना ही उन पर कर्ज का बोझ बढ़ता जाता है। वे बेहतर भविष्य के लिए जंगल साफ कर नए–नए गाँव बसाने का काम करते रहे पर दुर्भाग्यवश उनका बेहतर भविष्य कभी नहीं आया। संथाल न्यायालयों से भय खाते थे, केवल इसलिए नहीं कि वे न्यायालय की पेचीदगियों को नहीं जानते थे वरन् इसलिए कि सरकारी अमला और वकीलों को देने के लिए उनके पास पैसे नहीं होते थे।[2]

अगर कोई न्यायालय जाने की हिम्मत कर महाजनों के विरूद्ध परिवाद दाखिल भी करता तो परिणाम व्यर्थ ही नहीं नुकसानदेह भी होता। पुलिस महाजनों की तरफदारी करती और उसके पक्ष में रिर्पोट देती। कार्यापालक पदाधिकारियों द्वारा भी इस संबंध में कौई कदम नहीं उठाया जाता क्योंकि वे भी महाजनों के हाथ के खिलौना बन गए थे।[3]

दामिन–ई–कोह का विकास संथालो के कारण ही था पर इसके लिए उन्हें उचित पुरस्कार नहीं मिलता था। जब संथाल परगना में ब्रिटिश शासन प्रारंभ हुआ तो वृहत पैमाने पर जंगलो की सफाई हुई और समुचित खेती के लिए बढ़ावा दिया गया। कृषि की नई पद्धति की सलाह देकर ब्रिटिश शासकों ने उन्हें प्रोत्साहित किया। इससे उन्हें जंगल साफ करने के काम के लिए प्रोत्साहन मिला। इस उम्मीद के साथ इसमें अधिक से अधिक फायदा हो सके। लेकिन यह स्थिति बहुत दिनों तक कायम नहीं रही क्योंकी उन्हें पुनः वीरभूम के जमींदारों के अत्याचार का सामना करना पड़ा। अपने पैरो पर खड़ा होकर खेती करने के लिए इनके पास पैसे उपलब्ध नहीं थे। संथालो ने स्वंय देखा था कि उनके कष्ट के कारण थे–मिथ्या व्यवहार, साहेबों, ब्रिटिश नौकरशाहों और छोटे–छोटे अमलों की उपेक्षा, महाजनों का उद्दापन, अमलाओं का भ्रष्टाचार और सबसे ऊपर पुलिस का जुल्म। इन कष्टों के कारण थे– ईस्ट इंडिया कम्पनी से संबंध यूरोपियन पदाधिकारियों की अनुपस्थिति तथा बंगाली जमींदारों एवं अन्य दिक्कुओं तथा गैर–संथाल अप्रवासियों, कर्जदाता, महाजनों, दुकानदारो की उपस्थिति जो संथालों के बीच ऋण देने तथा व्यापार करने के लिए क्षेत्र में इक्कटठे हो गए थे।

दामिन–ई–कोह (संथाल परगना) का राजस्व प्रशासन अधीक्षक के अधीन था जिसकी सहायता के लिए चार नायाब, सजावाल थे। ये लगान वसूलने और जमीन संबंधी विवाद निपटाने के लिए बहुधा आया करते थे। अधीक्षक एक मात्र ऐसा यूरोपियन पदाधिकारी था जो दामिन आता रहता था पर उसे दीवानी और फौजदारी मामला निबटाने का अधिकार नहीं था। न्याय कार्य संथालो से कोसो दूर था। सरकारी अधिकारियों के बदले बंगाली महाजन संथालो के निकट थे। अपत्ययी और निर्धन संथाल आसानी से कर्ज और कर्ज के लिए जाने वाली अत्यधिक ब्याज के जाल में फँस जाते थे जिसे महाजन जबजस्ती वसूलते थे। एक बार अगर संथाल ने महाजनों से कर्ज ले लिया तो फिर उनके चंगुल से निकलने की उनकी बहुत कम ही उम्मीद रहती थी।[4]

दूसरा तरीका था कि जिससे संथालो को अपार कष्ट हुआ था कि कर्ज दाता महाजन कर्ज की भरपाई के बदले में उनकी वैयक्तिक सेवा और भारी दर पर ब्याज लेते थे। इस प्रथा को कमिया कहा जाता था अर्थात महाजनों के बंधुआ मजदूर इस प्रथा का विलियम लेफलेमिंग राबिन्सन, आई०सी० एस० की अभ्युक्ति से समझा जा सकता है जो 1858 में संथाल परगना में इस प्रथा के उन्मूलन के लिए क्रियाशील था। वस्तुतः यह प्रथा कमोबेश देश के लगभग सभी भागों में फैली हुई थी पर संथाल परगना में यह बहुत ही दर्दनाक स्थिति में अर्थात बहुत ही कठोर थी।

अध्ययन के उद्देश्य

वैसे संथाल गाँवों में जहाँ ग्राम प्रधान नहीं होते क्षेत्र निर्वाचन द्वारा एक सरकारी मंडल नियुक्त होता था। मंडल को ग्राम प्रधान को प्राप्त पुलिस शक्ति प्राप्त होती थी। एक नन–रेगुलेशन (अन–विनियमन) व्यवस्था लागू की गई। इसकी मुख्य विशेषता यह थी कि इसमें जनता और शासकों के बीच सीधा सम्पर्क रहता था।[5] इसके प्रमुख सिद्धांत इस प्रकार से थे–

1. संथाल और सहायक आयुक्त के बीच कोई बिचौलिया नहीं होगें।
2. शिकायत (परिवाद) बिना लिखित आवेदन और अमला की अनुपस्थिति में मौखिक रूप से की जा सकती थी।
3. सभी आपराधिक मामले स्वंय संथालो की सहायता से ही सम्पादित होते जिन्हें अभियुक्तों एवं साक्षियों को न्यायालय तक लाने थे। यह व्यवस्था प्रथम उपायुक्त भी एथले–इडेंन और आयुक्त जार्ज येल के अधीन इतनी असफलता के साथ कार्यान्वित हुई कि 1857 के विद्रोह के समय संथाल अपने को उस उपद्रव से विलग रख सके और संथालों को बहुत संख्या पुलिस के रूप में काम करने के लिए भरती किया जा सका।[6]

संथाली व्यवस्था के अनुसार, मांझी, ग्रामीणों द्वारा चुने जाते थे। अगर ग्रामीण उनसे असंतुष्ट होते तो वे उन्हें बर्खास्त करा सकते थे और दूसरे व्यक्ति को उस पद पर बैठा सकते थे। जिसे वे उपायुक्त को उन्हें नियुक्त एवं बर्खास्त करने का अधिकार था किन्तु बहुत ही आयवादिक मामलों में वह ग्रामीणों की इच्छा के विरूद्ध काम कर सकता था। उस विशिष्ट संकल्प में यह कहा गया था कि बंगाली जमींदारों एवं अन्यों की निर्दयता से बाहर होकर पहाड़ी लोगो को जो कुछ छोड़ना पड़ा था उसे सरकार सीधे अपने प्रबंधन में ले लेगी। इस प्रकार सरकार ने उन सब अधिकारों पर कब्जा कर लिया जो पहले जमीदारों के थे। जंगल विशेष रूप से पृथक् कर दिए गए। दामिन–ई–कोह की सभी सम्पत्ति राज्य सरकार के अधीन की सम्पत्ति घोषित कर दी गई।[7]

व्यापारिक वर्ग द्वारा शोषण – समान्यतः ग्रामीणों को उधार देने वाली एजेन्सियाँ थी, सरकार, सहाकरी समितियाँ कर्जदाता महाजन, संबंधी और व्यवसायी कर्जदाता महाजन या देशी बैंकर्स अन्य एजेन्सियों से उँची ब्याज दर पर

ऋण देते थे। फिर भी वे बहुत लोकप्रिय थे। क्योंकि उन तक पहुँच पाना आसान था और कर्जदारों को लालफीताशाही की परेशानियों से नहीं गुजरना पड़ता था। साथ ही लेन–देन शीघ्रता से हो जाता था वे बिना किसी भूमि बंधक कराये भी कर्ज देते थे। एक और जहाँ से ये कर्जदाता महाजन ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांश कर्ज देते थे। दूसरी और वे ग्रामीण कर्जदारों का शोषण करते थे और बहुत अधिक दर से ब्याज वसूलते थे जिसकी दर कर्जदार की आवश्यकता की सीमा को देखते हुए। 25 प्रतिशत से 75 प्रतिशत तक होती थी।[8]

संथाल परगना में कोई विनियमति बाजार नहीं था। बिहार के पड़ोसी जिलों तथा भागलपुर, मुंगेर, वीरभूम, आसनसोल के खुदरा व्यवसायियों का सीधा संबंध जिले के थोक व्यापारियों के साथ था। छोटे और कम साधन स्त्रोंत वाले जिले के व्यापारियों का स्थानीय थोक व्यापारियों से लेनदेन होता था।[9]

दूसरा पक्ष व्यवसाय और वाणिज्य के विकास का था। जिले के सृजन के साथ कई सड़को का निर्माण हुआ और मोटर गाड़ियों का आना– जाना शुरू हो गया। उन दिनों जिले की सड़को का मोटर गाड़ियों द्वारा भरपूर उपयोग होता था। रेलवे से व्यवसाय वाणिज्य के विकास में पर्याप्त सहायता मिली थी। जिले खनिज स्त्रोंतों का उस समय तक इसके बावजूद भरपूर दोहन नहीं हुआ था कि संथाल परगना की खानों की और लोगों का ध्यान बहुत पहले जा चुका था।

दामिन रैयतों के फायदे के लिए अन्य गोदाम शुरू करने का विचार सर्वप्रथम श्री सी०एच० बोम्पास के मन में उठा जो 1900 ई० में 1906 ई० तक जिला के उपायुक्त थे। 1902 ई० तक उन्होनें संथालो की खुशहाली के लिए भारी राशि व्यय कर दुमका में एक अन्य गोदाम तथा गोड्डा में 3 अन्य गोदाम बनाए।

सहकारिता बैंको ने संबंधता प्राप्त सोसाइटियों को कभी–कभी विशिष्ट कार्यों के लिए पैसा उधार (कर्ज) लेने वालों की घरेलू और सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कर्जदाता महाजनों की आवश्यकता समाप्त नहीं हुई। इस कारण कृषक वर्ग की ऋणग्रस्तता और रैयतों द्वारा महाजनों की चोरी–चुपके और अवैध ढंग से जमीन का अंतरण बढ़ता गया।

जहाँ तक कुटीर उद्योग से संबंधित मामलों का संबंध है, अनुसंधान के बाद पाया गया कि रस्सी–निर्माण, लौहगिरी, बढ़यगिरि, बुनाई, चमड़ा कमाने, कुक्कुट पालन जैसे पुराने उद्योग प्राचीन तौर तरीके से ही चल रहे थे। अभिलेख से ज्ञात होता है कि बहुत से पुराने उद्योगों को उज्जीवित किया गया था परन्तु ग्रामिणों का साकारात्मक रूख नहीं रहा। किसी ग्रामीण ने यह स्वीकार नहीं किया कि उसके कोई औद्योगिक ऋण प्राप्त हुआ है। ग्रामीण शिल्प और उद्योग पर सामुदायिक विकास योजना का प्रभाव पड़ा कि नहीं यह बहुत मुश्किल से देखा जा सकता है।[10]

शिक्षित व्यक्ति अधिकांशतः सरकारी सेवा पसंद करते थे। राज्य सरकार के पदाधिकारी कम ही रिक्तियों की सूचना नियोजनालय को देते थे। यह भी स्पष्ट था कि नियोजनालय में नाम लिखाने के लिए लोगों में उत्साह नहीं था। और वे नौकरी के लिए नियोजनालय पर निर्भर नहीं करते थे। दुर्भाग्य यह भी था कि नियोजनालय निबंधित व्यक्तियों के नियोजन के लिए कार्रवाई नहीं करते जब तक की वे अपने निबंधन का नवीकरण नहीं करा लेते। केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में इनके नियोजन के रास्ते बहुत कम थे। हरेक उपक्रमों में अधिकांश रिक्तियाँ राज्य सरकार की सेवा में सम्मेलन द्वारा भर दी जाती थी। अधिकांश लोगों के लिए जो निबंधित थे उपायुक्त वद दिलाने में असमर्थ सिद्ध हुआ था। नियोजन एक हम ही उपायुक्त व्यक्ति के चुनाव के लिए नियोजनालय पर निर्भर नहीं करते थे। वहाँ अनियोजित इतने प्रबुद्ध नहीं थे कि वे भिन्न–भिन्न जिलों के नियोजनालय में अपने को निबंधित कराते। यद्यपि कोई निश्चित निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता पर इतना कहा जा सकता है कि नियोजनालयों से अनियोजन की स्थिति का एक वर्तमान चित्र हमें प्राप्त होता है।[11]

निष्कर्ष

भारतीय मानव विज्ञानियों ने जनजाति एवं ग्रामीण समाज का बड़ा ही सुक्ष्म अध्ययन किया है और उनके सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तन की समस्या और प्रक्रिया का ज्ञान संभावनापूर्ण प्रतीत होता है। उपर्युक्त कोटी के लोगों के विकास के संबंध में योजना निर्माताओं और प्रशासकों को सहायता प्रदान करने के लिए वे पूरे तैयार मालूम होते है। किन्तु वे किस सीमा तक विकास कार्यक्रमों के आयोजन के लिए सुसंगत समझे जाते रहे है, यह स्वनिर्मित शिक्षाविदों के लिए गंभीरता से विचार करने की वस्तु है। अन्ततः मानव–विज्ञान और मानव विज्ञानी को बैठकखाना की केवल तस्वीर बनाने की इजाजत नहीं दी जानी चाहिए।[12]

संथालो को अपने प्रतिवेदी एजेन्सी के रूप में अनुमति देने के बाद अपराध को संथाल के मानदड़ों के अनुसार परिभाषित किया गया। संथाल मान्यता के अनुसार जो अपराधी नहीं थे या नहीं समझे जाते उन्हें तब प्रतिवेदित नहीं किया जाता था। इस प्रकार अन्यों के कानून के नाम पर हो रहे अन्याय को बहुत हद तक मिटा दिया गया। इसके अतिरिक्त अन्य सभी मामलों में जिसके लिए भारतीय दंड संहिता एक दंड विहित करता है। और जनजाति संहिता दूसरा दंड संथाल अपनी प्रक्रिया अपनाने के लिए बहुत हद तक स्वतंत्र है। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी की वृद्धि और विकास के अनुरूप हो रही सामाजिक गतिशीलता के साथ यह मानवीय पद्धति बहुत दूर तक क्रियाशील रही है।[13]

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *पासवान बिजेन्द्र, अंग्रेजी राज में संथालो के संघर्ष का इतिहास, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहट्टा, पटना, प्रथम संस्करण 2009, पृष्ठ संख्या–98*
2. *पासवान बिजेन्द्र, अंग्रेजी राज में संथालो के संघर्ष का इतिहास, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहट्टा, पटना, प्रथम संस्करण 2009, पृष्ठ संख्या–83*
3. *वर्मा दिनेश नारायण, संथाल विद्रोह : 1855– 1856, भारतीय लेखक और राष्ट्रवादी इतिहास लेखन,*

प्रकाशक एकेडमिक फोरम पब्लिकेशन सेण्टर रामपुरघाट– 731224, जिला–वीरभूम, पश्चिम बंगाल, प्रथम संस्करण–2017, पृष्ठ संख्या– 63

4. *सिंह वंदना, संथाल विद्रोह, जानकी प्रकाशन अशोक राजपथ चोहट्टा पटना, प्रथम संस्करण– 2009, पृष्ठ संख्या– 68*
5. *पासवान बिजेन्द्र, अंग्रेजी राज में संथालो के संघर्ष का इतिहास, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहट्टा, पटना, प्रथम संस्करण 2009, पृष्ठ संख्या– 100*
6. *पासवान बिजेन्द्र, अंग्रेजी राज में संथालो के संघर्ष का इतिहास, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहट्टा, पटना, प्रथम संस्करण 2009, पृष्ठ संख्या– 101*
7. *दत्त के०के०, बिहार में स्वतंत्रय आंदोलन का इतिहास भाग–3, प्रकाशक–बिहार, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, द्वितीय संस्करण– 1999, पृष्ठ संख्या–255*
8. *पासवान बिजेन्द्र, अंग्रेजी राज में संथालो के संघर्ष का इतिहास, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहट्टा, पटना, प्रथम संस्करण 2009, पृष्ठ संख्या– 105*
9. *पासवान बिजेन्द्र, अंग्रेजी राज में संथालो के संघर्ष का इतिहास, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहट्टा, पटना, प्रथम संस्करण 2009, पृष्ठ संख्या– 106*
10. *हरिवंश, झारखण्ड दिसुम मुक्ति गाथा और सृजन के सपने, प्रकाशन राजकमल प्रकाशन प्रा० लि० 1–B, नेताजी सुभाष मार्ग नई दिल्ली, पहला संस्करण– 2002, पृष्ठ राज्य 127, 128*
11. *पासवान बिजेन्द्र, अंग्रेजी राज में संथालो के संघर्ष का इतिहास, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहट्टा, पटना, प्रथम संस्करण 2009, पृष्ठ संख्या– 110*
12. *पासवान बिजेन्द्र, अंग्रेजी राज में संथालो के संघर्ष का इतिहास, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहट्टा, पटना, प्रथम संस्करण 2009, पृष्ठ संख्या– 111*
13. *पासवान बिजेन्द्र, अंग्रेजी राज में संथालो के संघर्ष का इतिहास, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहट्टा, पटना, प्रथम संस्करण 2009, पृष्ठ संख्या– 112*